



आदि कांड

राम - जन्म

त्रेता युग की बात है। सरयू नदी के किनारे कौशल नाम का एक प्रसिद्ध राज्य था, जहाँ अज के पुत्र राजा दशरथ राज्य करते थे। अयोध्या उस राज्य की राजधानी थी। यह नगरी बारह योजन लम्बी और तीन योजन चौड़ी थी। नगर के चारों ओर ऊँची और चौड़ी दीवारें थीं और उसके बाहर गहरी खाई। दीवार पर सैंकड़ों शतधनियाँ तोपें रखी थीं। सहस्त्रों सैनिक और महारथी नगर की रक्षा में तत्पर रहते थे।

नगर के बीचों बीच राजमहल था। राजमहल से आठ सड़कें बराबर दूरी पर परकोटे तक जाती थीं। नगर में अनेक उद्यान, सरोवर और क्रीड़ा-ग्रह थे। ऊँची-ऊँची अट्टालिकाएँ थीं, जिनमें विद्वान, शूरवीर, कलाकार, कारीगर और व्यापारी रहते थे। घर-घर में लक्ष्मी का निवास था। बाज़ार अच्छी से अच्छी वस्तुओं से भरे रहते थे। नगर के लोग स्वस्थ और सदाचारी थे कुल मर्यादा के अनुसार सभी अपने धर्म का पालन करते थे। सभी जगह शान्ति, पवित्रता और एकता का वास था।

राजा दशरथ बड़े प्रतापी और सदाचारी थे। सागर, रघु, दिलीप और अपने पूर्वजों की तरह उनका भी यश चारों ओर फैला हुआ था। आठ सुयोग्य मंत्रियों की सहायता से वे राज काज चलाते थे। इन मंत्रियों में सुमंत्र मुख्य थे। मंत्रियों के अतिरिक्त वशिष्ठ, वामदेव, जाबालि आदि राज-पुरोहित भी राजा को परामर्श देते थे। इनकी सहायता से राजा सदा प्रजाहित के कार्यों में लगे रहते थे।

राजा दशरथ ने बहुत दिन तक राज-सुख का भोग किया, उन्हें धन, मान, यश किसी की कमी न थी। पर उन्हें एक दुख था। उनके कोई सन्तान न थी। जीवन उन्हें सूना-सा लगता था। उनकी रानियाँ कौशल्या, सुमित्रा और कैकयी भी इस कारण दुखी रहती थीं।

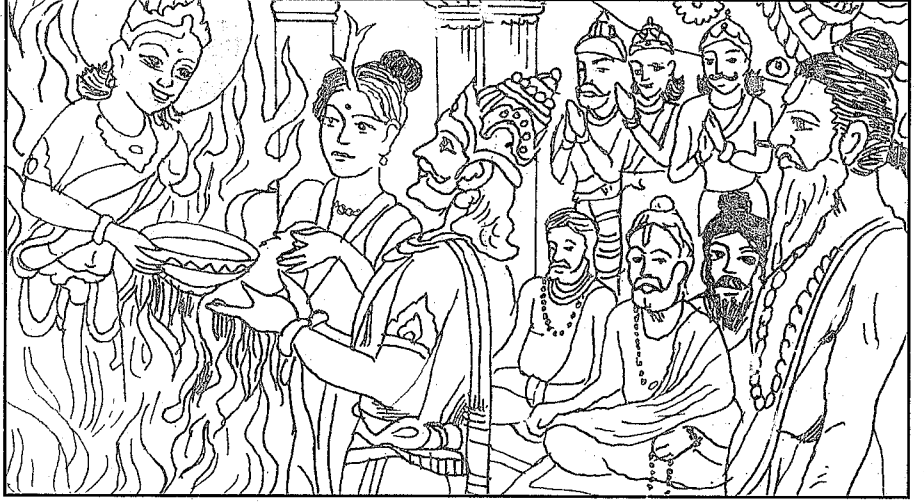
राजा ने इस विषय में अपने मंत्रियों और पुरोहितों से बात की। सबकी सलाह से यह निश्चय हुआ कि पुत्रेष्टि यज्ञ किया जाए। सुमंत्र ने प्रस्ताव किया कि महान तपस्वी ऋष्यशृंग को यज्ञ का आचार्य बनाया जाए। यह राय सबको पसन्द आई।

यज्ञ की तैयारियाँ होने लगीं। राजा दशरथ स्वयं ऋष्यशृंग को बुलाने गये। सब राजाओं को निमन्त्रण दिया गया। मिथिला के राजा भी यज्ञ में सम्मिलित होने के लिये आए। अनेक ऋषि मुनि भी आमंत्रित हो कर आए। सरयू नदी के किनारे यज्ञशाला का निर्माण हुआ। ऋष्यशृंग ने शुभ मुहूर्त में यज्ञ प्रारम्भ किया। यज्ञ का घोड़ा छोड़ा गया। एक वर्ष बाद जब घोड़ा लौट कर आया तब बड़ी रानी कौशल्या ने उसका तिलक किया। अब वेद मंत्रों की मंगल-ध्वनि यज्ञशाला में गूँज उठी। अग्नि में आहुतियाँ पड़ने लगीं। राजा दशरथ ने अंतिम आहुति डाली, तो अग्नि देव स्वयं सोने के पात्र में खीर लेकर उनके सामने प्रकट हो गये।

ऋष्यशृंग ने अग्निदेव से खीर का पात्र ले लिया और राजा दशरथ को देकर कहा कि यह खीर पुत्रदायक है। अपनी रानियों को इसका सेवन कराइए। खीर लेकर राजा ने उसको सिर से लगा लिया। उन्होंने खीर का पात्र कौशल्या को देकर कहा कि तुम सब इसे बांट लो। कौशल्या ने आधी खीर अपने

लिये रख ली शेष आधी सुमित्रा को दे दी। सुमित्रा ने उस आधी खीर का आधा अपने लिये रखकर शेष कैकेयी को दे दिया। कैकेयी ने उसमें से आधी खीर स्वयं ली और आधी सुमित्रा को ही लौटा दी।

समय आने पर चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी को बड़ी रानी के गर्भ से श्रीराम ने जन्म लिया। इस तिथि पर हम आज भी रामनवमी का पर्व मनाते हैं। मंझली रानी सुमित्रा के दो पुत्र हुए- लक्ष्मण और शत्रुघ्न। कैकेयी के एक पुत्र हुआ। उसका नाम भरत रखा गया।



संगी रिषिहि वशिष्ठ बोलावा, पुत्रकाम सुभ जग्य करावा।

भक्ति सहित मुनि आहुति दीन्हें, प्रकटे अग्निनि चरु कर लीन्हें॥

राजा ने बड़ी धूम-धाम से पुत्रोत्सव मनाया। राजमहल में मंगलाचार होने लगे और स्त्रियाँ बधाइयाँ गाने लगीं। देवताओं ने फूलों की वर्षा की। अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। राजा और रानी के हर्ष का ठिकाना न रहा।

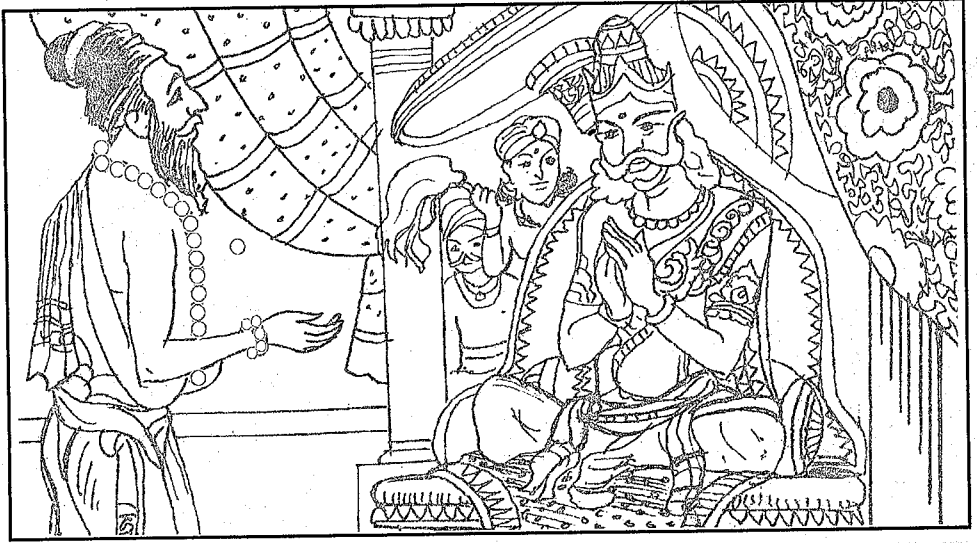
चारों राजकुमार बड़े सुन्दर थे। धीरे-धीरे वे बड़े हुए और साथ-साथ खाने-खेलने लगे। चारों में बड़ी प्रीति थी। लक्ष्मण राम के साथ अधिक रहते और शत्रुघ्न भरत के साथ। चारों भाई जब अयोध्या की गलियों में खेलने निकलते तब लोग उन्हें देखकर ठगे से रह जाते। राम के रूप में अद्भुत आकर्षण था। उन्हें जो देखता, वह देखता ही रह जाता।

विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा

अब राजकुमार बड़े हो चले थे। राजा दशरथ ने उनको सुयोग्य शिक्षकों के पास आश्रम में भेजा। राजकुमारों ने थोड़े ही समय में वेद, शास्त्र, पुराण और राजनीति में योग्यता प्राप्त कर ली। धनुर्विद्या और धनुर्वेद में वे कुशल हो गए। वीरता तो उनके रक्त में ही थी। चारों भाई सब विद्याओं में निपुण और पराक्रमी थे। उनमें राम सर्वोपरि थे। बलविक्रम के साथ उनमें शील, विनय आदि गुण भी थे। अपने पुत्रों के रूप, गुण और शील स्वभाव को देखकर माता-पिता हर्ष से फूले नहीं समाते थे।

राजकुमारों के युवा होने पर राजा को उनके विवाह की चिन्ता हुई। वे इस विषय में एक दिन मंत्रियों और पुरोहितों से बातचीत कर ही रहे थे कि द्वारपाल ने समाचार दिया, “महाराज महर्षि विश्वामित्र पधारे हैं।” सुनते ही राजा दशरथ सिंहासन छोड़ कर उनके स्वागत के लिये आगे बढ़े। राजा ने मुनि को सादर

प्रणाम किया, उन्हें उचित आसन पर बैठाया और सेवा सत्कार से संतुष्ट किया। इसके बाद राजा दशरथ हाथ जोड़ कर बोले, “भगवन् आपके पधारने से हमारी नगरी धन्य हुई है। अब आज्ञा करें कि क्या सेवा करूं।” विश्वामित्र प्रसन्न होकर बोले, “राजन्, विशेष कार्यवश ही आपके पास आया हूं। हमारे यज्ञ में राक्षस विघ्न डाल रहे हैं। राक्षस राजा रावण के दो अनुचर मारीच और सुबाहु हमें यज्ञ नहीं करने देते। यज्ञ की रक्षा के लिए हम आपके वीर पुत्र राम को माँगने आए हैं। मेरे साथ उन्हें भेज दीजिए। आप डरें नहीं, राम की भी इसमें भलाई है। मैं आज ही लौट जाना चाहता हूँ।”



मुनि आगमन सुन जब राजा, मिलन गयउ लै विप्र समाजा।

इतना सुनते ही राजा के प्राण सूख गए। वे गिड़गिड़ा कर विश्वामित्र से बोले ऋषिराज, यह आपने कैसी बात कह दी? रावण के सामने तो देवता, दानव, गंधर्व कोई खड़ा भी नहीं हो सकता। उससे वैर मोल लेना हंसी का खेल नहीं। मेरा राम तो अभी बालक ही है। मैं अपनी सेना लेकर आपके साथ चलता हूँ और आपके यज्ञ की रक्षा करूंगा। मेरे प्राण प्यारे राम पर कृपा कीजिए। बुढ़ापे में पुत्र वियोग से मुझे दुःखी न कीजिए।” इतना कहकर राजा विश्वामित्र के चरणों पर गिर पड़े।

विश्वामित्र रुष्ट होकर बोले, “राजन्, आपका आचरण तो रघुवंशियों जैसा नहीं है। लो, मैं जाता हूँ।” तब राजगुरु वशिष्ठ ने राजा को समझाया, “महर्षि विश्वामित्र सिद्ध पुरुष हैं, तपस्वी हैं और अनेक गुप्तविद्याओं के पंडित हैं। वे कुछ सोच-समझकर ही आपके पास आए हैं। राम को जाने दें। कोई इनका बाल भी बाँका न कर सकेगा।”

तब राजा दशरथ ने राम को विश्वामित्र के हाथ सौंप दिया। लक्ष्मण भी बड़े भाई के साथ चल दिए। विश्वामित्र के पीछे-पीछे धनुष बाण लिए दोनों भाई सरयू के किनारे-किनारे जा रहे थे। जब वे तीन कोस दूर निकल गए, तब विश्वामित्र ने कहा- “तुम दोनों भाई नदी में आचमन कर मेरे पास आओ। मैं तुम्हें बला-अतिबला नाम की विद्याएं सिखाना चाहता हूँ। इन विद्याओं के मिलने पर तुम्हारा आत्मबल बढ़ जाएगा और आसुरी शक्तियों से तुम्हारी सुरक्षा रहेगी।” दोनों भाइयों ने ऋषि की आज्ञा का पालन किया। विद्याओं के ग्रहण करते ही उनमें नवीन स्फूर्ति आ गई। उस दिन वे सरयू नदी के किनारे ही टिक गए।

अगले दिन वे सरयू के किनारे-किनारे फिर आगे बढ़े। सरयू और गंगा के संगम पर उन्होंने गंगा पार की। अब वे एक भयानक वन में पहुँचे। जहाँ-तहाँ हाथी, सिंह, सुअर दिखाई पड़ने लगे। हिंसक पशुओं की आवाजों से वन गूँज रहा था। महर्षि विश्वामित्र ने बताया यहाँ से दो कोस दूरी पर ताड़का रहती है। वह बड़ी बलवती, भयानक और दुष्टा है। उसने अपने पुत्र मारीच की सहायता से यहाँ के जनपदों को उजाड़ दिया है। अब तो यहाँ भयानक वन ही तुम देख रहे हो। आज तुम्हें उसका संहार करना है। स्त्री समझकर उसे छोड़ना ठीक न होगा।



चले जात मुनि दीन्ह देखाई, सुनि ताड़का क्रोध करि धाई।

श्रीराम ने उत्तर दिया- मैं आपकी आज्ञा का अवश्य पालन करूँगा। यह कह कर उन्होंने धनुष की डोरी खींचकर छोड़ दी। उसकी टंकार से दिशाएं गूँज उठी। महाराक्षसी ताड़का भी उसे सुनकर एक बार घबरा गई और फिर गरजती हुई दौड़ी। राम के पास पहुँचकर उसने धूल का बादल उड़ाया और वह पत्थरों की वर्षा करने लगी। राम ने उसे बाणों से घायल कर दिया। तब ताड़का अपनी लम्बी बाहें फैलाकर राम पर झपटी। वह अदृश्य होकर फिर पत्थर बरसाने लगी।

राम ने उसे चारों ओर से बाणों से घेर लिया। फिर उसके हृदय में उन्होंने ऐसा तीक्ष्ण बाण मारा कि वह हरहरा कर गिर पड़ी। विश्वामित्र ने राम को गले लगा लिया। प्रसन्न होकर ऋषि ने दण्डचक्र, कालचक्र, ब्रह्मास्त्र आदि अनेक दिव्य अस्त्र राम को दिए।

राम और लक्ष्मण को साथ लिए मुनि विश्वामित्र अपने सिद्धाश्रम तक आगे बढ़ते गए। महर्षि विश्वामित्र का यही आश्रम था। आश्रम वासियों ने उनका यथोचित सत्कार किया। विश्वामित्र ने उसी दिन यज्ञ आरम्भ कर दिया। पांच दिन तक यज्ञ निर्विघ्न चलता रहा। छठे दिन आकाश में घोर गर्जना सुनाई पड़ी। देखते-देखते काले बादल जैसे दो विशालकाय राक्षस वहाँ आ पहुँचे। इनमें से एक ताड़का का पुत्र मारीच था और दूसरा उसका साथी सुबाहु था। इन राक्षसों के पीछे बहुत बड़ी सेना भी थी। श्रीराम ने मारीच पर मानवास्त्र चलाया। उसके आघात से वह मूर्छित हो गया और बहुत दूर समुद्र के पास जा गिरा। जब उसे होश आया तो वह दक्षिण की ओर भाग गया। सुबाहु को श्रीराम ने आग्नेयास्त्र से मार डाला और सारी राक्षस सेना का वायव्यास्त्र से संहार कर दिया। विश्वामित्र का यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो गया। विश्वामित्र ने राम को हृदय से लगा लिया। सब ऋषि राम की प्रशंसा करने लगे।

श्रीराम ने मुनि के चरणों में प्रणाम किया और हाथ जोड़कर पूछा- “अब हमारे लिये क्या आज्ञा है?” विश्वामित्र ने बड़े स्नेह से कहा- “वत्स, मिथिला के राजा जनक को तुम जानते होंगे। वहाँ बहुत बड़ा यज्ञ हो रहा है। हम लोगों को वहाँ जाना है। तुम दोनों भाई भी हमारे साथ चलो। राजा जनक के यहाँ विचित्र धनुष भी है उसे कोई उठा भी नहीं पाता। वह धनुष भी तुम देखना।

जनकपुरी में राम और लक्ष्मण

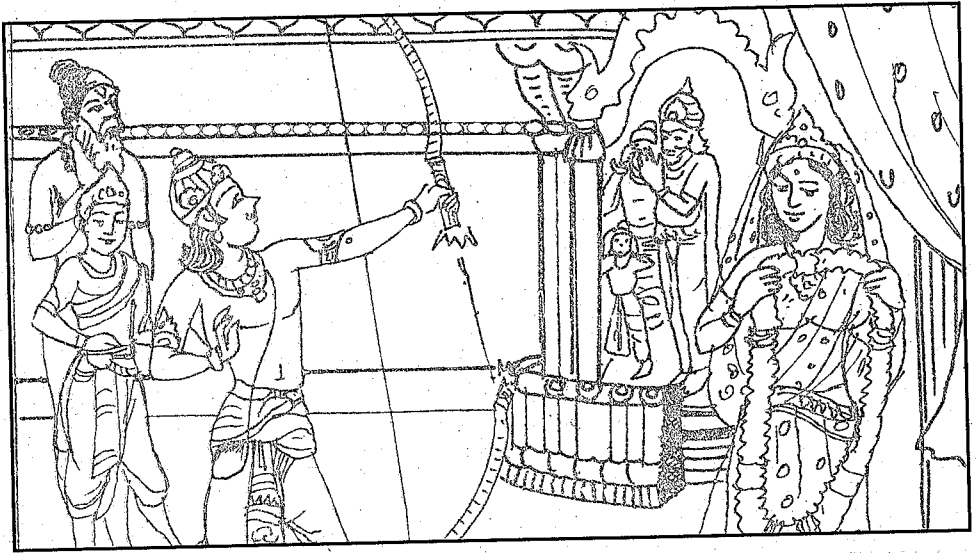
विश्वामित्र के साथ दोनों राजकुमार मिथिला के लिए चल दिए। सिद्धाश्रम के अनेक अन्य ऋषि भी साथ में थे। विश्वामित्र तरह-तरह की पौराणिक कथाएं सुनाते जाते। नये स्थानों और वनों के विषय में श्रीराम उनसे पूछते और मुनि बड़े प्रेम से उनकी कथा बताते। सोन नदी को पार कर वे सब एक बड़े सुन्दर प्रदेश में पहुँचे। वहाँ बड़े सुहावने वन थे। श्रीराम ने उस देश के बारे में मुनि से पूछा। विश्वामित्र ने बताया कि यह मेरा ही देश है। बहुत पहले मैं यहाँ का राजा था। इसी प्रसंग में उन्होंने वंशावली भी राम लक्ष्मण को बताई। रात को विश्राम कर वे फिर आगे बढ़े। विश्वामित्र ने गंगाजी की उत्पत्ति, पार्वती की कथा और स्वामीकार्तिक के जन्म की कहानी राम-लक्ष्मण को मार्ग में सुनाई।

जब वे मिथिला के निकट पहुँचे तो नगर के बाहर उन्हें एक सूना - सा आश्रम दिखाई पड़ा। श्री राम ने उसके विषय में जानना चाहा। ऋषि बोले किसी समय यह गौतम मुनि का आश्रम था। जब वे अपनी पत्नी अहिल्या के साथ यहाँ रहते थे, तब इसकी शोभा अद्भुत थी। एक दिन बड़ी दुखद घटना हुई। एक रात को सेवरा हो जाने के भ्रम में, जब गौतम ऋषि गंगा-स्नान को चले गए तो ऋषि के वेश में इन्द्र आश्रम में घुस आया। जब वह आश्रम से निकल रहा था, उसी समय महर्षि गौतम आ पहुँचे। इन्द्र को देखकर उन्हें क्रोध हो आया। उसे कठोर शाप दिया। उन्होंने अहिल्या का भी त्याग कर दिया। अब वह पत्थर की

मूर्ति की तरह रहती है। मन में राम राम कहती हुई दिन काट रही है। यह कथा सुनकर राम को अहिल्या पर दया आई। राम ने आगे बढ़कर ऋषि - पत्नी के पैर छुए। राम का स्पर्श पाते ही अहिल्या शाप मुक्त हो गई वह पहले की तरह सुन्दर भी हो गई। गौतम ऋषि ने भी अहिल्या को सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस घटना से राम का यश चारों ओर फैल गया।

राजा जनक को विश्वामित्र के आने का समाचार मिला। वे सतानन्द तथा अन्य ऋषियों को लेकर स्वागत करने के लिए नगर के बाहर आए। आते ही उन्होंने मुनि को आदर के साथ प्रणाम किया और कुशल समाचार पूछा। जब उनकी दृष्टि राम-लक्ष्मण की ओर गई, तब राजा जनक की आँखें खुली की खुली रह गई। उन्होंने विश्वामित्र जी से पूछा- “ये सुन्दर बालक कौन हैं? किसी राजकुल के भूषण हैं, अथवा साक्षात् भगवान ही हैं? मेरा सहज विरागी मन भी उन्हें देखकर इनकी ओर खिंचा चला जा रहा है।” विश्वामित्र ने कहा- महाराज! आपका कहना ठीक ही है। वे कौशल नरेश महाराज दशरथ के पुत्र हैं। आपके ‘सुनाभ’ नाम के विचित्र धनुष को दिखाने के लिए मैं इन्हें अपने साथ ले आया हूँ। पुत्री सीता के विवाह के संबंध में जो आपने प्रण किया है, उसे मैं सुन चुका हूँ।” राजा जनक ने मुनि की स्तुति की और यज्ञशाला के निकट के एक रमणीक उद्यान में मुनि और राम-लक्ष्मण के ठहरने का प्रबंध कर दिया।

अगले दिन गुरु विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण यज्ञशाला में गए। राजा ने उन्हें एक ऊँचे आसन पर बैठाया। विश्वामित्र ऋषि ने जब फिर धनुष की बात छोड़ी, तब जनक ने सेवकों को बुलाकर धनुष ले आने



तेहिं छन राम मध्य धनु तोरा, भरे भुवन धुनि घोर कठोरा।

की आज्ञा दी। यह धनुष लोहे के आठ पहियों वाले एक बड़े संदूक में रखा था। उसे खींचकर जब सेवक ले आए, तब राजा जनक बोले- “मुनिवर! यह शंकरजी का धनुष है। देवताओं ने हमारे पूर्वज देवरात को इसे दिया था। इस भारी धनुष को कोई नहीं उठा सका। प्रत्यंचा चढ़ाना तो दूर की बात है। मेरे प्रण को सुनकर अनेक राजा और देव दानव आए और लज्जित होकर चले गए।”

गुरु का संकेत पाकर श्रीराम ने धनुष सहज ही उठा लिया और ज्यों ही प्रत्यंचा चढ़ाकर उसे खींचना चाहा कि वह बीच से टूट कर दो टुकड़े हो गया। वज्रपात जैसा भयंकर शब्द हुआ और पृथ्वी कांपने लगी।

धनुष टूटते ही राजा जनक के हर्ष का ठिकाना न रहा। राम के सौन्दर्य और बल विक्रम को देखकर वे बोले- मुनिवर! आपकी कृपा से मुझे अपनी प्यारी बेटी के लिए मनचाहा वर मिल गया। अगर आपकी अनुमति मिल जाए, तो मैं महाराज दशरथ के पास संदेश भेजकर बारात ले आने का निमंत्रण भेज दूँ। विश्वामित्र बोले, - अब क्या पूछना! शुभ कार्य में देर क्यों की जाए।

राजा जनक ने अपने चतुर मंत्रियों को शीघ्रगामी रथ द्वारा अयोध्या जाने की आज्ञा दी।

राम विवाह

राजा जनक के मंत्रियों द्वारा राम-लक्ष्मण का समाचार पाकर राजा दशरथ बड़े आनन्दित हुए। धनुर्यज्ञ की बात सुनकर तो उनके आनन्द का ठिकाना न रहा। महल में जाकर उन्होंने सब समाचार रानियों को सुनाया। रानियाँ भी फूली न समाई। उन्होंने ब्राह्मणों को दान दक्षिणा दी।

गुरु वशिष्ठ की आज्ञा लेकर राजा दशरथ बारात की तैयारी करने लगे। हाथी, घोड़े और रथ सभी सजने लगे। छैल छबीले सवार घोड़े नचाने लगे, गुरु वशिष्ठ और राजा दशरथ दिव्य रथों में बैठे। चतुरंगिणी सेना के साथ बारात चल पड़ी और पांचवें दिन मिथिला जा पहुँची। राजा जनक ने नगर के बाहर आकर बारात का स्वागत किया और भली भाँति सजाए गए जनवासे में सबको ले जाकर यथा योग्य ठहराया।

राजा जनक की सारी नगरी जगमग-जगमग कर रही थी। एक-एक घर, एक-एक द्वार वंदनवारों से सजा था। चारों ओर मंगल गीत सुनाई दे रहे थे। राजमार्ग और राजमहल में दर्शकों की अपार भीड़ थी। विवाह मंडप मणियों और हीरों के फूलपत्तों से सजा था। मणियों के बने भौरे और तरह-तरह के पक्षी विवाह मंडप पर जड़े थे, जो हवा चलने से गूँजते-कूँजते थे।

चारों राजकुमारों को लेकर गुरु वशिष्ठ के साथ महाराज दशरथ विवाह-मंडप में पधारे। बहुमूल्य वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित चारों राजकुमारियों को लेकर राजा जनक भी मंडप में आए। राजमहल की अनेक स्त्रियाँ भी सजकर विवाह देखने पहुँची। राजा जनक सीता को दिखाकर महाराज दशरथ से बोले- राजन्! यह मेरी बेटी सीता है जो मुझे हल चलाते समय पृथ्वी से मिली थी। आपके वीर पुत्र राम ने मेरा प्रण पूराकर इसे वरण करने का अधिकार प्राप्त किया है। यह मेरी दूसरी पुत्री उर्मिला है। ये दोनों कन्याएं मेरे छोटे भाई कुशध्वज की हैं। बड़ी का नाम मांडवी है तथा छोटी का श्रुतकीर्ति। मेरी इच्छा है कि सीता के विवाह के साथ ही इनका भी विवाह हो जाए। लक्ष्मण के लिए उर्मिला को, भरत के लिये मांडवी को और शत्रुघ्न के लिए श्रुतकीर्ति को स्वीकार कर मुझे कृतार्थ करें। जनक के प्रस्ताव को राजा दशरथ ने सहर्ष स्वीकार कर लिया, तब अग्नि के सामने चारों कन्याओं को अपने अपने पतियों के हाथ में सौंपते हुए राजा जनक ने कहा कि कन्याओं को मैं तुम्हारे हाथ सौंपता हूँ। ये छाया की भाँति तुम्हारे साथ रहेंगी। तुम उनका पाणिग्रहण करो, इनकी सब तरह से रक्षा करना तुम्हारा धर्म होगा। गुरु वशिष्ठ और सतानन्द ने वेद-मंत्रों के साथ विधिवत विवाह कराया।

तब राजा दशरथ राजकुमारों और पुत्र वधुओं को लेकर जनवासे लौट आए। जनक ने कन्याओं को मूल्यवान वस्तुएं दीं और सब बारातियों को सुन्दर उपहार दिए। राजा दशरथ ने भी सोने से सींग मढ़ाकर दूध देने वाली सहस्त्रों गायें ब्राह्मणों को दान में दी। दूसरे दिन विश्वामित्र ने आकर राजा दशरथ को बधाई दी और सबसे विदा लेकर वे अपने आश्रम को लौट गए।

कुछ दिन तक जनक का आतिथ्य ग्रहण करने के पश्चात् राजा दशरथ बारात के साथ अपने नगर को लौट चले। वे कुछ ही दूर गए होंगे कि सहसा भयंकर आंधी-सी आई और उसके साथ ही क्रोध की साक्षात् मूर्ति परशुराम फरसा और धनुषबाण लिए प्रकट हो गए। उन्हें देखते ही अयोध्या वासी डर के मारे अधमरे से हो गए और राजा दशरथ के तो होश ही उड़ गये।

राम का रास्ता रोक कर परशुराम बोले- 'राम! शिव के पुराने धनुष को तोड़कर, तुम्हारा हौंसला बहुत बढ़ गया है। मैं तुम्हारे अंहकार को चूर करूँगा।' राजा दशरथ ने गिड़गिड़ाकर परशुराम से बड़ी अनुनय-विनय की और राम पर अनुग्रह करने की प्रार्थना की। परशुराम ने दशरथ की बात सुनी-अनसुनी कर दी और राम से फिर बोले, 'मेरे इस धनुष को चढ़ाओ, यदि न चढ़ा सके तो तुम तत्काल मेरे इस फरसे का आहार बनोगे।'।

यह सुनते ही राजा दशरथ तो बेसुध होकर गिर पड़े। तेजस्वी राम निर्भीकता से बोले, "मेरा रूप आप देखना चाहते हैं तो देखें। मैं इस बाण से आपकी तपस्या का समस्त प्रभाव भी समाप्त करता हूँ और मनोगति से आकाश में विचरण करने की शक्ति नष्ट करता हूँ।" परशुराम हतप्रभ हो गए। उन्होंने राम की स्तुति की और आशीर्वाद दिया तथा यह प्रार्थना की कि तप का फल भले ही नष्ट कर दें परन्तु मनोगति नष्ट न करें जिससे मैं महेन्द्र पर्वत पर लौट सकूँ। श्रीराम ने उनकी बात मान ली। परशुराम राम की प्रशंसा करते हुए तत्काल चले गए। परशुराम के चले जाने के बाद बारात आगे बढ़ी।

बारात के पहुँचते ही अयोध्या में घर-घर आनन्दोत्सव होने लगे। गलियों में शंख और मृदंग की ध्वनि गूँज उठी। स्त्रियों ने मंगल-गान किए और फूल बरसाये। रानियों ने पुत्रों और पुत्रवधुओं की आरती उतारी। उस समय राजा दशरथ के भवन की शोभा देखते ही बनती थी। राजकुमार शील-गुण-सम्पन्न पत्नियां पाकर बड़े प्रसन्न थे। सीता जी के अनुपम रूप, गुण और सेवा से श्रीराम और सास-ससुर सब प्रकार से संतुष्ट थे।

राजकुल में दिन-दिन सुख-समृद्धि की वृद्धि होने लगी। समस्त कौशल राज्य का भाग्य जग गया।

प्रश्न

1. राजा दशरथ और उनकी राजधानी का संक्षेप में वर्णन करो।
2. श्री राम के जन्म की क्या कथा है ?
3. विश्वामित्र श्रीराम को लेने के लिए क्यों आए ? श्रीराम और लक्ष्मण को महर्षि की सेवा से क्या लाभ हुआ ?
4. अहिल्या कौन थी ? उसके उद्धार की कथा बताओ।
5. सीता और राम के विवाह की कथा संक्षेप में बताओ।
6. राम और परशुराम की भेंट का संक्षेप में वर्णन करो।